अमर उजाला

नई दिल्ली । सोमवार, 10 जून 2019

प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

मनुष्य की शांति की कसौटी समाज में ही हो सकती है, हिमालय की चोटी पर नहीं।
- महात्मा गांधी

टप्पल में कुछ दरिंदों ने एक मासूम के साथ जिस बर्बरता का परिचय दिया, उसके लिए उन्हें सख्त सजा तो मिले ही, प्रशासन-व्यवस्था को इस मामले में सांप्रदायिक भावनाओं से ऊपर उठकर काम करने की जरूरत भी है।

बर्बरता की पराकाष्ठा

अलीगढ़ के टप्पल कस्बे में कुछ लोगों ने मिलकर पड़ोस की ही ढाई साल की एक मासूम के साथ जिस किस्म की हैवानियत का परिचय दिया, वह रोंगटे खड़े कर देने वाली तो है ही, यह घटना प्रशासन-व्यवस्था पर भी प्रतिकूल टिप्पणी है। सहसा विश्वास नहीं होता कि उधारी के दस हजार रुपये के तगादे पर अपमानित महसूस कर कोई इस नृशंसता पर भी उतर सकता है कि एक मासूम बच्ची की जान ले ले। पीड़ित और आरोपियों के घर आसपास ही हैं। दोनों परिवारों में दोस्ती थी, तभी तो लड़की के पिता ने उसे कर्ज दिया था। लेकिन अपमान का बदला लेने के लिए उसने सुनियोजित ढंग से कर्ज देने वाले की मासूम बेटी के साथ जिस बर्बरता का परिचय दिया, और इसमें उसकी पत्नी, दोस्त और परिवार के दूसरे लोगों की संलिप्तता जिस तरह सामने आई है, वह बेहद स्तब्ध करती है। परिवार वालों ने बेटी के गायब होने के बाद ही थाने में शिकायत की थी, पर उन्हें लौटा दिया गया, जो बताता है कि सरकार बदलने के बावजूद स्थानीय स्तर पर पुलिस के कामकाज में बहुत फर्क नहीं आया है। अगर स्थानीय पुलिस ने शिकायत के बाद ही तत्काल सक्रियता का परिचय दिया होता, तो उस मासूम को बचाया जा सकता था या नहीं, यह तो नहीं कह सकते, लेकिन तब उसके शव की इतनी दुर्गति नहीं होती। गुड़ियों से खेलने वाली ढाई साल की जिस लड़की को अभी दुनिया देखनी थी, वह इतनी बदतर मृत्यु की हकदार नहीं थी। पुलिस की वह शुरुआती निष्क्रियता इसलिए भी अक्षम्य है, क्योंकि उस मासूम के पड़ोसी आपराधिक प्रवृत्ति के थे और उनमें से एक थोड़े ही दिनों पहले जमानत पर छूटा था। अपराधियों को उनकी बर्बरता के लिए सख्त से सख्त सजा मिलनी चाहिए। इससे पहले कठुआ में भी एक मासूम बच्ची ऐसी ही बर्बरता का शिकार हुई थी, जिससे सांप्रदायिक सद्भाव तार-तार हो गया था। टप्पल की उस मासूम बच्ची के परिजनों को न्याय दिलाने के लिए जगह-जगह लोग जिस तरह सड़कों पर उतर आए हैं, उसे समझा जा सकता है। बच्चियों के साथ ऐसा सुलूक कोई सभ्य समाज बर्दाश्त नहीं कर सकता, तिस पर यह सरकार तो 'बेटी बचाओ' जैसा अर्थपूर्ण सामाजिक संदेश भी देती है। अलबत्ता सरकार और प्रशासन को इसका भी ध्यान रखना होगा कि सांप्रदायिक विद्वेष और भय का माहौल न बने, क्योंकि मिली-जुली आबादी वाला अलीगढ़ का यह कस्बा सांप्रदायिक सद्भाव के लिए जाना जाता रहा है।

पहले विदेश दौरों का संदेश

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने पहले विदेश दौरे के रूप में मालदीव और श्रीलंका को चुना, जो पाकिस्तान से अलग बिम्सटेक और मध्य एशिया पर भारत के फोकस को दर्शाता है।

महेंद्र वेद, वरिष्ठ पत्रकार

लंबे समय से भारत के अपने छोटे पड़ोसी देशों के साथ रिश्ते का वर्णन करते हुए उसके साथ बिग ब्रदर शब्द जोड़ा जाता रहा है, मानो वह हमेशा से उन्हें धमकाने की कोशिश करता है। भारत ने जो कुछ किया है, उसके मद्देनजर इसे फिर से परिभाषित करने का समय आ गया है। यह तत्काल जरूरी है, क्योंकि भारत अपने प्रभाव वाले क्षेत्रों में तेजी से चीन से पिछड़ता जा रहा है।

भारत पिछले कई महीनों से राष्ट्रीय चुनाव में फंसा हुआ था और अब यह अपने पड़ोसी देशों पर ध्यान देने के लिए तैयार है। नरेंद्र मोदी अपनी सरकार की 'पड़ोसी पहले' की नीति पर कायम रहते हुए अपने दूसरे कार्यकाल में सबसे पहले मालदीव और फिर श्रीलंका की यात्रा पर गए। इसी तरह वह अन्य पड़ोसी देशों की भी यात्रा करेंगे, क्योंकि उनकी सरकार कूटनीतिक आधार पर चल रही है। पूर्व विदेश सचिव और अब नए विदेश मंत्री एस जयशंकर के आने से इसमें तेजी आई है। वास्तव में यह समय गंवाने का अवसर नहीं है।

श्रीलंका से पहले मोदी ने मालदीव की यात्रा संपन्न की, जहां हाल ही में लोकतंत्र की सुखद बहाली हुई है। वहां न केवल प्रधानमंत्री मोदी को मालदीव के सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित किया गया, बल्कि उन्होंने मालदीव की संसद-मजलिस को संबोधित भी किया। वहां की संसद में उन्होंने बिना नाम लिए आतंकवाद को लेकर पाकिस्तान पर जमकर हमला बोला और कहा कि कुछ देश अब भी अच्छे और बुरे आतंकी का फर्क करने की गलती करते हैं। उन्होंने आतंकवाद को मानवता के लिए सबसे बड़ा खतरा बताया।

मोदी की यात्रा के तीन उद्देश्यों के बारे में विदेश सचिव विजय गोखले ने पहले ही बताया था। सबसे पहले, निकटतम पड़ोसी देशों के साथ उच्चतम स्तर पर संपर्क बनाए रखना है। दूसरा, हम मालदीव की अर्थव्यवस्था के पुनरुद्धार और विकास में भागीदार के रूप में सहायता करना चाहते हैं और तीसरा, दोनों देशों के लोगों के बीच संपर्क को मजबूत बनाना चाहते हैं। दोनों देशों ने रक्षा और समुद्र समेत महत्वपूर्ण क्षेत्रों में द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने के लिए छह समझौतों पर दस्तखत किए, जिनमें सिविल सेवकों का प्रशिक्षण, सीमा शुल्क और 'व्हाइट शिपिंग' शामिल हैं। उल्लेखनीय है कि 'व्हाइट शिपिंग' समझौते के तहत दो देश एक दूसरे के समुद्री क्षेत्र में वाणिज्यिक जहाजों के बारे में दोनों देशों की नौसेना के बीच सूचना का आदान-प्रदान करते हैं। रक्षा क्षेत्र को भी कोई कम महत्व नहीं दिया गया। मोदी और स्वालेह ने संयुक्त रूप से दो रक्षा संबंधी परियोजनाओं का उद्घाटन किया-तटीय निगरानी रडार प्रणाली और मालदीव रक्षा बलों के लिए समग्र प्रशिक्षण केंद्र (एमएनडीएफ)। परियोजनाओं की कुल लागत 1.8 अरब डॉलर है। एमएनडीएफ की क्षमता बढ़ाने के लिए मालदीव सरकार द्वारा प्रशिक्षण केंद्र के लिए आग्रह किया गया था। तटीय रडार निगरानी प्रणाली मालदीव की राजधानी माले को व्हाइट शिपिंग की निगरानी और विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र में उसकी संप्रभुता के संरक्षण में मदद करेगी। सुरक्षा सुदृढ़ करने के लिए कनेक्टिविटी आवश्यक है। इसलिए भारत ने कोच्चि से मालदीव के लिए एक फेरी सेवा की योजना बनाई है।

पिछले साल एक वीजा सुविधा समझौता हुआ था और भारत ने 200 करोड़ डॉलर के बजटीय समर्थन का वादा किया है। दोनों देश मुद्रा विनिमय समझौते को अंतिम रूप दे रहे हैं। भारत ने मालदीव के शहर अड्डू में शहरी विकास केंद्र और छोटे एवं लघु उद्यमों के विकास के लिए वित्तपोषण प्रोजेक्ट तथा 36 द्वीपों पर पानी की आपूर्ति और सीवर के लिए 80 करोड़ डॉलर की क्रेडिट लाइन दी है। भारत ने एलईडी बल्बों के अनुदान के साथ माले के जलवायु परिवर्तन प्रयासों का भी समर्थन किया है। दोनों देशों के बीच एक अनूठे क्षेत्र-क्रिकेट में नया अध्याय खुला है। मालदीव अपनी क्रिकेट टीम और स्टेडियम चाहता है और इसमें उसे भारत की सहायता चाहिए।

जहां तक श्रीलंका की बात है, तो इसकी आंतरिक स्थिति और घरेलू राजनीति हमेशा दक्षिण भारत पर प्रभाव डालती है। जब राष्ट्रपति सिरीसेना ने प्रधानमंत्री रानिल विक्रमसिंघे को बाहर करने का विफल प्रयास किया, तो उन्होंने कथित तौर पर भारतीय खुफिया एजेंसी रॉ के साथ मिलीभगत का आरोप लगाया। लेकिन वहां की संसद के स्पीकर और सुप्रीम कोर्ट ने सिरीसेना के कदमों पर रोक लगा दी। अब रॉ पर लगाया गया आरोप दब गया है। अब वह कहते हैं कि 'प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा हमारे लिए काफी महत्वपूर्ण है। हम पड़ोसी और मित्र हैं। भारत और श्रीलंका का रिश्ता 2,600 वर्ष पुराना है।'

आतंकवाद एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जो पूरे हिंद महासागर क्षेत्र को जोड़ता है, जो कि अस्थिर पश्चिम एशिया, आईएसआईएस और सोमालिया से संचालित समुद्री डाकुओं से संबंधित है। भारत ने सेशल्स और मॉरीशस समेत छोटे देशों की मदद की है।

श्रीलंका में विगत अप्रैल में ईस्टर रविवार को आतंकवादी हमले के बाद सिरीसेना ने भी आतंकवाद के खिलाफ एक सख्त संदेश दिया था, जिसमें उन्होंने कहा था कि कुछ देशों के घरेलू आतंकवादी हैं, जो साफ तौर पर बिना नाम लिए पाकिस्तान की तरफ इशारा था। मोदी ने न सिर्फ आतंकी हमले में मारे गए पीड़ितों के साथ एकजुटता प्रदर्शित की, बल्कि कोलंबो को यह संदेश भी दिया कि भारत आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई में उसका पूरी तरह से समर्थन करने को तैयार है। पड़ोसी देश पाकिस्तान के साथ निरंतर दुश्मनी के बजाय भारत अब बिना कुछ बोले चुपचाप पाकिस्तान को अलग-थलग करने में लगा है।

इन दो देशों की प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा मुख्य रूप से पाकिस्तान से अलग बिम्सटेक और मध्य एशिया पर भारत के फोकस को दर्शाती है। विदेश मंत्री जयशंकर ने पहले ही कहा है कि सार्क के साथ समस्याएं हैं, जो आतंकवाद तक सीमित नहीं हैं। उनके साथ संपर्क और व्यापार सबंधी भी समस्याएं हैं। भारत अफगानिस्तान और पश्चिम एशिया तक अपनी पहुंच बनाना चाहता है, जो उसके विस्तृत पड़ोस का निर्माण करता है। अब यह देखना होगा कि निकट भविष्य में भारत की यह नीति कैसे काम करती है!

अंतर्ध्वनि

>> कुबेरनाथ राय

असत्य भी यथार्थ का चेहरा लगाकर लीला करता है

हमारे दरवाजे की बगल में त्रिभंग-मुद्रा में एक टेढ़ नीम खड़ा है, जिसे राह चलते एक वैष्णव बाबाजी ने नाम दे दिया था, 'कुब्जा-सुंदरी'। बाबा जी ने तो मौज में आकर इसे एक नाम दे दिया था, रात भर हमारे अतिथि रहे, फिर 'रमता योगी बहता पानी'! बाद में कभी भेंट नहीं हुई। परंतु तभी से यह नीम मेरे लिए श्रीमद्भागवत का एक पन्ना बन गया। इसके वक्रयष्टि-छंद में मुझे तभी से एक सौंदर्य बोध मिलने लगा। वैसे भी यह है बड़े फायदे की चीज। अपने आप उगा, बिना किसी परिचर्या के बढ़ता गया, पौधे से पेड़ बन गया और अब मुफ्त में शीतल छांह देता है, हवा को शुद्ध और नीरोग रखतता है, हजार किस्म के रोगों के लिए उपचार-द्रव्य के रूप में छाल, पत्ती, फूल, फल और तेल देता है, पशु और मनुष्य के रोगों से जूझता है, सबसे बढ़कर सुबह-सुबह दातुन के रूप में मुंह साफ करता है, बाद में मैं अपना मुंह गंदा करूं, तो यह बेचारा क्या करे? नाम भले ही वृंदावनी हो पर इसकी भूमिका वैष्णवता के उस साफ-सुथरे संस्करण की है, जिसे संत कबीर ने अपनाया था। इस नीम 'कुब्जा सुंदरी' के नीचे चंद्र-विधौत रात्रियों में मैं कभी-कभी अपनी खाट पर लेटे-लेटे आंखें मूंद कर इसका एकाध पन्ना पढ़ लेता हूं। आंखें खोलकर तो यथार्थ ही पढ़ा जाता है। परंतु आंखें मूंदकर सत्य भी पढ़ा जा सकता है। आधुनिक साहित्यकार की ट्रेजडी यह है कि वह पेट के बल यथार्थ से बुरी तरह चिपका हुआ रेंगता चल रहा है और परा यथार्थ सत्य से उसकी भेंट नहीं हो पाती। उसके पास आंखें मूंदकर आराम से देखने-सुनने की फुरसत कहां! फलतः वह विश्वास ही नहीं कर पाता है कि यथार्थ और सत्य दो तरह की बातें हैं और यथार्थ से भी बड़ी सच्चाई है सत्य। 'प्रति सत्य' और 'असत्य' भी यथार्थ का चेहरा लगा कर लीला करता है और खुली आंखें प्रायः धोखे में आ जाती हैं। दो खुली आंखों से देखने की एक सीमा है। वे एक ही दिशा में देख सकती हैं।

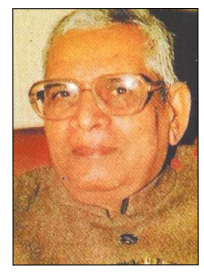

-दिवंगत हिंदी साहित्यकार

मंजिलें और भी हैं

>> किशोर राव

मां की मौत ने कैंसर पीड़ितों की मदद के लिए प्रेरित किया

मैं बंगलूरू का रहने वाला हूं। मेरे मिशन की शुरुआत मेरी मां की मौत के बाद हुई। वह कैंसर पीड़ित थीं। उनके जाने के बाद यह बात मेरे दिमाग में बैठ गई कि कैंसर पीड़ितों को सहारा और शांति देने के लिए काम करना चाहिए। मैंने पहले कैंसर के शुरुआती लक्षण के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए कैंप लगाना और मदद देना शुरू किया। लेकिन उस समय मैं नौकरी कर रहा था, जिसकी वजह से इस काम के लिए ज्यादा समय नहीं मिल पाता था। तब मैंने सोचा कि समय से पूर्व रिटायरमेंट ले लेने से इस काम को आगे बढ़ाना आसान हो जाएगा। इसके बाद रिटायरमेंट लेकर कैंसर के अंतिम चरण से जूझ रहे लोगों की देखभाल करने के लिए मैंने खुद को समर्पित कर दिया। उस समय तक कैंसर पीड़ितों के लिए योजनाबद्ध तरीके से प्रयास नहीं किए जा रहे थे। सबसे पहले मैं उन लोगों की पहचान करने में लग गया, जो रोगियों की मदद कर सकते थे। इसके बाद कैंसर के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए गठित इंडियन कैंसर सोसाइटी और रोटरी क्लब के सहयोग से मैंने बंगलूरू में हॉस्पिस ट्रस्ट नाम से एक चैरिटेबल ट्रस्ट की स्थापना की। यहां उन कैंसर पीड़ितों की देखभाल की जाती है, जिनकी बीमारी आखिरी स्टेज पर पहुंच चुकी होती है।

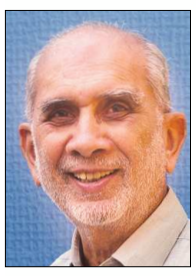

हम इन्हें जो सेवा देते हैं, वह पूरी तरह से मुफ्त है, चाहे वह बेड, दवाइयां, परामर्श हो या फिर भोजन।

मैंने सोचा कि रोगियों की उनके घर में ही देखभाल करना सबसे सही तरीका रहेगा। महीने भर के अंदर ही नर्सों की एक टीम और एक काउंसलर को रख लिया गया। मेरी टीम ऑटो से रोगियों की घर उनकी मदद करने जाती थी। इस बीच मैं किसी ऐसे संगठन की तलाश में मुंबई गया, जो मेरी इस पहल में सहयोग देने के लिए आगे आए।

मैं बॉम्बे हाउस में टाटा हेड ऑफिस पहुंच गया। पर बिना समय लिए पहुंचने के कारण वहां किसी से बात हो पाना कठिन था। मैं वहां से लौटने के लिए तैयार था, तभी वहां के कार्यकारी निदेशक से बात करने में सफलता मिली। हमें एक सप्ताह के भीतर ट्रस्ट द्वारा इस काम के लिए 10 लाख की राशि की स्वीकृति दिए जाने की सूचना मिली। इससे हमें बहुत बड़ा सहारा मिला और आगे बढ़ने का एक साधन मिल गया।

एक मई 1999 को करुणाश्रय की बिल्डिंग बनकर तैयार हुई, और पहला मरीज लाया गया। अब तक लगभग 23,000 कैंसर मरीजों की मदद की गई है। हम इन्हें जो सेवा देते हैं, वह पूरी तरह से मुफ्त है, चाहे वह बेड, दवाइयां, परामर्श हो या फिर भोजन। हम उनकी आखिरी इच्छा पूरी करने की जिम्मेदारी गंभीरता से लेते हैं।

दुख की बात बस यह है कि हर दिन औसतन हम दो मरीजों को खो देते हैं, क्योंकि वे हमारे पास बीमारी की अंतिम अवस्था में आते हैं। हर तरह की परिस्थितियों में अलग-अलग लोगों का मुझे सहयोग मिलता रहा। मुझे विश्वास नहीं था कि एक डिनर पर उस समय की प्रसिद्ध आर्किटेक्ट स्व. तारा चंदावरकर के साथ हुई बातचीत से हमें करुणाश्रय के लिए जगह मिलने की संभावना पैदा हो जाएगी। मेरी उनसे काफी लंबी बातचीत हुई और अंत में वह हमारे लिए मुफ्त में एक जगह देने की योजना बनाने के लिए तैयार हो गईं। हम जो कर रहे हैं, उसमें उनका सहयोग बहुत महत्वपूर्ण समय पर मिला। मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे अपने तरीके से उन्होंने अपना हाथ मेरी पीठ पर रख दिया हो और मैं जो करना चाहता था, उसकी ओर मुझे आगे बढ़ा रही हों। जो बात मुझे ताकत देती है, वह यह है कि करुणाश्रय से सभी मरीज शांति और संतोष के साथ इस दुनिया से विदा लेते हैं।

-विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित।

जातिवाद और करिश्मे का अंत

उत्तर भारत की राजनीति के ये दो शक्तिशाली खंभे अगर न गिरे होते, तो उत्तर प्रदेश में महागठबंधन इतनी बुरी तरह पराजित न होता। करिश्मा अगर बचा होता, तो राहुल गांधी अमेठी में नहीं हारते।

तवलीन सिंह

चुनाव तो कब के समाप्त हो गए हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश और बिहार की चुनावी रणभूमि पर अभी तक दो शव पड़े हैं, जिनका अंतिम संस्कार करना बाकी है। एक शव है करिश्मा का और दूसरा है जाति आधारित राजनीति का। ये महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दे हैं, सो इनका अंतिम संस्कार करना हम राजनीतिक पंडितों का काम है। अभी तक हमने ऐसा इसलिए नहीं किया है, क्योंकि यह यकीन करना मुश्किल है कि उत्तर भारत की राजनीति के ये दो सबसे शक्तिशाली खंभे वास्तव में गिर गए हैं। अगर ये खंभे गिरे न होते, तो उत्तर प्रदेश में महागठबंधन इतनी बुरी तरह पराजित न हुआ होता और न ही मायावती इस गठबंधन को तोड़ने की बात करतीं। ऐसे ही बिहार में लालू यादव के राष्ट्रीय जनता दल का इतना बुरा हाल हो चुका है कि वह लोकसभा चुनाव में एक भी सीट नहीं जीत पाया। उनकी बेटी मीसा भारती भी हार गईं।

रही करिश्मे की बात, तो साफ दिखता है कि इस पुराने चुनावी हथियार में ऊर्जा बची होती, तो राहुल गांधी अमेठी में नहीं हारते। सो दोनों शव हमको दिखते तो हैं, लेकिन यकीन नहीं आता कि ये कभी पुनर्जीवित नहीं होने वाले, क्योंकि ये दशकों से चुनाव जिताते आए हैं। मेरे जैसे वरिष्ठ पत्रकारों ने वे दिन देखे हैं, जब इंदिरा गांधी का चेहरा देखकर मतदाता उनको अपना वोट दे दिया करते थे।

वह दौर देखा है मैंने, जब मुलायम सिंह और लालू यादव की इतनी शक्ति थी कि मुलायम सिंह ने समाजवादी पार्टी को अपने परिवार की निजी कंपनी में परिवर्तित कर दिया था और फिर भी वह जीत सकते थे। लालू यादव ने जेल जाने से पहले बिहार सरकार को पत्नी राबड़ी देवी के हवाले कर दिया था। इतने गलत काम करने के बाद भी इन यादव क्षत्रपों को कोई हरा नहीं सकता था। उत्तर प्रदेश में मुलायम सिंह का मुकाबला सिर्फ मायावती कर सकती थीं, जिनकी अपनी राजनीति भी जातिवाद पर आधारित थी।

नरेंद्र मोदी के आने से पहले भारतीय जनता पार्टी अगर उत्तर प्रदेश में जातिवादी राजनीतिक दलों को कभी चुनौती दे पाई, तो राम मंदिर के नाम पर, और वह भी केवल थोड़े समय के लिए। जातिवाद का झंडा तब इतना ऊंचा लहराता था कि दिल्ली के राजनीतिक पंडित उसको देखकर कल तक भविष्यवाणी कर रहे थे कि प्रधानमंत्री बनने की दौड़ में मायावती सबसे आगे हैं।

हमारे सारे समीकरण इस चुनाव में गलत साबित हुए हैं, तो शायद इसलिए हुए, क्योंकि हम अतीत के किसी गड्ढे में फंसे रहे, जहां से हमें दिखाई नहीं दिया कि इस देश के मतदाता हमसे आगे निकल गए हैं। दिखाई नहीं दिया हमें कि कभी जो जगह करिश्मा और जातिवाद की होती थी, वह जगह अब विकास और परिवर्तन ने ले ली है। सच तो यह है कि पिछले पांच साल में मैं जब भी चुनाव का हाल जानने दिल्ली के बाहर जाती थी, तो मुझे साफ दिखाई देता था कि मतदाताओं के लिए मुद्दे बदल चुके हैं। स्पष्ट शब्दों में लोग कहते थे कि उनका वोट मोदी को जाएगा, क्योंकि जब से मोदी प्रधानमंत्री बने हैं, उन्होंने परिवर्तन आते हुए देखा है।

फिर दिल्ली वापस लौटकर जब मैं अपने पत्रकार बंधुओं से बातें करती थी, तो मुझे यह यकीन हो जाता था कि राहुल गांधी और उनकी बहन प्रियंका का करिश्मा नरेंद्र मोदी को हरा देगा। मुझे यकीन हो जाता था कि जातिवाद की शक्ति अब भी इतनी है कि नरेंद्र मोदी दोबारा किसी हाल में उत्तर भारत में उतनी सीटें नहीं ला पाएंगे, जो उनको वर्ष 2014 में मिली थीं। लेकिन दिल्ली के कई प्रसिद्ध राजनीतिक पंडितों को मुंह की खानी पड़ी है।

हरियाली और रास्ता

राघव, नानी और कहानी

एक युवक की कहानी, जिसे नानी ने जिंदगी का महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाया।

राघव घर के एक कोने में गुमसुम बैठा था। तभी उसकी नानी आकर कहने लगीं, राघव, तुम इतने गुमसुम क्यों हो? राघव बोला, नानी, हमारे पास तो सब कुछ है। फिर मुझे इतनी मेहनत करने की क्या जरूरत है? मेरा स्कूल में एकदम मन नहीं लगता। मुझे पढ़ने की क्या जरूरत है? नानी बोलीं, बात तो गंभीर है। पर क्या तुम अपने थैले में जरूरत का सामान इकट्ठा कर रहे हो? राघव हैरान होकर बोला, कैसा थैला? नानी बोलीं, मैं तुम्हें एक कहानी सुनाती हूं। एक राजा था। उसके तीन बेटे थे। एक दिन राजा ने अपने बेटों को आदेश दिया कि थैला लेकर बगीचे में जाएं और अच्छे-अच्छे फल जमा करें। वे तीनों अलग-अलग बागों में चले गए। पहले बेटे ने काफी मेहनत से पिता की पसंद के बढ़िया और ताजा फलों से थैला भरा। इसमें उसे पूरा दिन लग गया। दूसरे बेटे ने सोचा, राजा हर फल का परीक्षण तो करेंगे नहीं, इसलिए उसने जल्दी-जल्दी ताजा, कच्चे, गले-सड़े फल थैले में भर लिए। तीसरे बेटे ने सोचा, राजा की नजर तो सिर्फ भरे हुए थैले की तरफ होगी, वे खोलकर तो देखेंगे भी नहीं कि इसमें क्या है। उसने उस थैले में घास, और पत्ते भर दिए। उसी दिन राज्य पर हमला हुआ और राजा और उनके बेटों को जेल में बंद कर दिया गया। अब जेल में उनके पास सिर्फ वे थैले थे। जिस बेटे ने अच्छे-अच्छे फल जमा किए, वह तो मजे से खाता रहा। पर जिसने सड़े-गले फल जमा किए थे, वह खराब फल खा बीमार हो गया। उसे बहुत तकलीफ हुई। और तीसरा बेटा, जिसने थैले में घास-पत्ते जमा किए थे, कुछ ही दिनों में भूख से मर गया। नानी बोलीं, हमारी जिंदगी ही हमारा थैला है। इस कहानी में हम जिन फलों की बात कर रहे हैं, वह है हमारा ज्ञान। हम जितना ज्ञान इकट्ठा करेंगे, उतना आगे तक जा पाएंगे।

जिंदगी का हर पल कीमती है। इसका बहुत समझदारी से उपयोग करें।

खुली खिड़की

नोबेल पुरस्कार

नोबेल को विश्व का सबसे प्रतिष्ठित पुरस्कार माना जाता है। नोबेल फाउंडेशन द्वारा स्वीडन के वैज्ञानिक अल्फ्रेड नोबेल की याद में इसे वर्ष 1901 में शुरू किया गया। वर्ष 2018 तक यह पुरस्कार पाने वालों में सबसे ज्यादा अमेरिकी शामिल हैं।

स्त्रोत : विकीपीडिया, स्पेक्टेटर इंडेक्स

सत्संग

भक्ति के साथ शक्ति

स्वामी विवेकानंद धर्म प्रचार करते हुए एक रियासत में पहुंचे। वहां का राजा धर्म के नियमों को धता बताकर लोगों का उत्पीड़न किया करता था। स्वामी जी का प्रवचन समाप्त होने के बाद कुछ व्यक्ति उनके पास अपना दुखड़ा सुनाने पहुंचे। उन्होंने स्वामी जी से कहा, हम धर्म के अनुरूप जीवन जीने का प्रयास करते हैं। लेकिन राजा के लठैत हमें चैन से भगवान की भक्ति और परिवार का पालन करने नहीं देते। हमें क्या करना चाहिए? स्वामी जी ने उनसे पूछा, क्या तुम्हारा राजा पड़ोस के राजा से भी झगड़ा करता है? उन लोगों ने बताया कि पड़ोस का राजा ज्यादा शक्तिशाली है, इसलिए हमारा राजा उनसे डरता है। स्वामी जी ने कहा, यही तो प्रकृति का नियम है। शिकारी हिरण और दूसरे कमजोर प्राणियों का ही शिकार करता है। मछुआरा निरीह मछलियों को ही जाल में फंसाता है। कुछ अंधविश्वासी लोग देवता के सामने निरीह बकरे की बलि देते हैं। क्या आपने कभी किसी को शेर की बलि देते देखा है? थोड़ा रुककर वह बोले, आप सब भगवान की भक्ति के साथ संगठित शक्ति का परिचय दें। जब राजा का कारिंदा धमकी देने आए, तो सब एकजुट होकर उनका मुकाबला करें। स्वामी जी की प्रेरणा से ग्रामीणों ने संगठित होकर राजा के लठैतों का विरोध करना शुरू किया, तो उनके होश ठिकाने आ गए। उन्होंने लाठी के बल पर उन लोगों को सताना छोड़ दिया।

-संकलित